रचनात्मक कार्यकर्ता और चुनाव

रजि० नं० बी ४४४८

हरिजनसेवक

दो आना

(स्थापक : महात्मा गांधी)

भाग १५ सम्पादक : किशोरलाल मशरूवाला सह-सम्पादक : मगनभाओी देसाओी अंक २४

मुद्रक और प्रकाशक
जीवणजी डाह्याभाओी देसाओी
नवजीवन मुद्रणालय, अहमदाबाद-९

अहमदाबाद, शनिवार, ता० ११ अगस्त, १९५१

वार्षिक मूल्य देशमें रु० ६
विदेशमें रु० ८; शि० १४

बापू और महादेवभाओी

१० नवम्बर '४२

सुबह घूमते समय बापू कहने लगे, "महादेवको मेरा वारिस होना था; पर मुझे अुसका वारिस होना पड़ा है। मीराबहनको महादेवभाओीकी समाधि पर मेरा जाना खटकता है, मगर मेरे लिअे वह बिलकुल सहज बन गया है। मैं न जाअूं तो बेचैन हो जाअूं। वहां जाकर मैं कुछ करना नहीं चाहता, समय भी नहीं देना चाहता। मगर हो आता हूं, अितना ही मेरे लिअे बस है। अगर मैं जिन्दा रहा तो यह जमीन आगाखांसे मांग लूंगा। वह न दे, यह संभव हो सकता है। मगर किसी रोज तो हिन्दुस्तान आजाद होगा। तब यह यात्राका स्थान बनेगा। मैं वहां जाता हूं तो महादेवके गुणोंका स्मरण करनेके लिअे, अुन्हें ग्रहण करनेके लिअे। मैं अुसकी स्मृतिको खोना नहीं चाहता। और जिस तरहसे वह यहां मरा, अुससे अुसके, अुसकी स्त्री और लड़केके प्रति मेरी वफादारी भी मुझे बताती है कि मुझे वहां नियमित रूपसे जाना चाहिये। हो सकता है कि मेरी जिन्दगीमें यह जगह मुझे न मिल सके और अिस जगहको यात्रा-स्थल बनते मैं न देख सकूं, मगर किसी-न-किसी दिन वह जरूर बनेगा, अितना मैं जानता हूं। आज तो मैं सब काम अुसका काम समझकर करता हूं। बाहर जाअूंगा तब भी अुसीका काम करूंगा।" (जिन जगहों पर महादेवभाओी और कस्तूरबाका दाहसंस्कार हुआ था, वे गांधीजीकी अिच्छानुसार प्राप्त कर ली गअी हैं।)

९ फरवरी '४३

शामको घूमते समय बापू भाओी (प्यारेलालजी) से कहने लगे, "मान लो अिस अुपवास (१० फरवरी '४३ से शूरू होनेवाला) के कारण मैं लोप हो जाअूं तो तुम लोगोंसे मैं क्या आशा रखूंगा, यह समझ लो। महादेवकी मैं भाटकी तरह स्तुति करता हूं, मगर मेरा मन अुसकी शिकायत भी करता है। अुसकी मिसाल सम्पूर्ण या आदर्श नहीं मानना चाहिये। वह अिस विचारका जप करते-करते चला गया कि 'मैं बापूके बाद क्या कर सकता हूं? बापूसे पहले चला जाअूं तो अच्छा है।' मगर अुसे तो कहना चाहिये था कि 'नहीं, मुझे तो जिन्दा रहना है और बापूका काम करना है'। यह दृढ़ संकल्प अुसे मरनेसे रोक भी लेता। मैं अगर अिस अुपवासमें लोप हो जाअूं, तो मैं अपना संदेश अधूरा छोड़ जाअूंगा। सत्याग्रहके विज्ञानको मैं पूरी तरह देशके सामने अभी नहीं रख सका। मेरे बाद मेरा संदेश जनता तक कौन पहुंचावेगा? जो लोग मेरे साथ रहे ही नहीं, मुझे जानते ही नहीं, वे लोग यह काम करेंगे या तुम लोग? मैं मानता हूं कि वह तुम्हारा काम है। यह कहना कि हम क्या कर सकते हैं, अुचित नहीं। अीश्वर पर श्रद्धा रखोगे तो वह तुम्हें शक्ति देगा कि तुम मेरे संदेशको कैसे पूरा करो। मेरा कहना है कि जैसे मैंने किया है, जो सिद्धान्त मैंने सबके सामने रखे हैं, जिन पर मैं आचरण करता हूं, अुन सबको तुम लोग अपने जीवनमें धारण करो। तुम्हारा मार्ग अपने आप तुम्हारे सामने खुलता जावेगा। तुम्हें और सुशीलाको अिसकी तैयारी करनी चाहिये। तुमने अेक बार पूछा था कि सत्याग्रही जड़वत् क्यों लगते हैं। मैंने अुस दिन जो अुत्तर दिया था, अुसे स्मरण रखो। मेरे बाद वे जड़वत् नहीं रहेंगे। जब तक कोअी रास्ता बतानेवाला होता है, तो सभी अुसकी ओर देखते हैं; और जब वह नहीं होता, तो वे अपने आप अपने पैरों पर खड़े होते हैं। सो जब हमारे लोग अपने आप अपने पांव पर खड़े होंगे, तो भगवान् अुन्हें अगला कदम सूझा देगा। आजसे अुसका विचार भी नहीं करना चाहिये।"*

'पहली पंचवर्षीय योजना' पर टीका — १

खेती

खेतीके विकासका विचार करते हुअे खेतीके दो भाग करने चाहिये : पहले भागमें मिलोंके लिअे काममें आनेवाले कच्चे मालका, यानी लम्बे रेशेकी कपास, पटसन, तम्बाकू, गन्ना, आदिका अुत्पादन आता है; दूसरेका संबंध खाद्यान्नोंके अुत्पादनसे है। परिशिष्टमें खर्चका जो विवरण दिया गया है, अुससे भी अिसका कोअी अन्दाज नहीं मिलता कि पहले प्रकारकी खेतीके लिअे, यानी मिलोंकी मददके लिअे जो खेती होती है, अुसके लिअे कितना पैसा खर्च किया जायगा और दूसरी शुद्ध खेतीके लिअे कितना मिलेगा। यह याद रखना चाहिये कि मिलोंके लिअे कच्चे मालके अुत्पादनसे संबंध रखनेवाली शोधके लिअे जो मदद दी जाती है, वह अेक तरहसे मिलोंको ही दी हुअी अप्रत्यक्ष मदद है। लोगोंकी निगाहमें न आनेवाली अिस मददका कोअी विचार नहीं किया जाता। लेकिन वह वास्तविक मदद है, अिससे अिनकार नहीं किया जा सकता; और अुस हद तक खाद्यान्नोंसे संबंध रखनेवाली शुद्ध खेती सरकारी मददसे वंचित रह जाती है।

अिसी तरह यातायातके साधनों, बिजली आदिके विकास और शहरोंमें मकान आदि बनवाने पर जो पैसा खर्च होता है, वह भी अधिकांशमें बड़े अुद्योगोंकी परोक्ष सहायता ही है। लेकिन यह सहायता बाहर प्रगट नहीं होती।

जंगली जानवरोंसे होनेवाले खेतीके नुकसानका कोअी विचार अिसमें नहीं हुआ है। किसानोंके रास्तेमें यह अेक बड़ी भारी अड़चन है। बन्दर, नीलगाय, जंगली सुअर, आदि अन्नके अुत्पादनको भारी नुकसान पहुंचाते हैं। कोअी भी योजना, जो अिस समस्याको सुलझानेके अुपाय नहीं बताती, पूरी नहीं कही जा सकती।

योजनामें सुझाव किया गया है कि विभिन्न फसलोंकी सही योजनाका काम 'ग्राम-समितियों' को दिया जाय। लेकिन यह स्पष्ट

* 'बापूकी कारावास-कहानी' से — लेखिका : सुशीला नय्यर।

www.vinoba.in

नहीं बताया गया है कि वे अिस योजना पर अमल कर सकें, अिसके लिअे अुनके पास क्या सत्ता होगी। गांवोंमें हमेशा कुछ अैसे विशेष स्वार्थोंवाले लोग तो होंगे ही, जो नियंत्रणको नहीं मानेंगे। कुछ किसान भी व्यापारिक लाभकी फसलें बोना चाहेंगे, जो सरकारी अन्न-वसूलीके मातहत नहीं आतीं, और जो आर्थिक दृष्टिसे ज्यादा लाभकारी होती हैं। मुझे लगता है कि अिस विषयमें किसी दिग्दर्शक अुसूलका स्वीकार होना चाहिये, जिसके आधार पर अिस विषयका ठीक निश्चित नियम बनाया जा सके; अुदाहरणके लिअे, अगर हमारा अुद्देश्य प्रादेशिक स्वयंपूर्णता है, तो यह मालूम किया जा सकेगा कि अुस क्षेत्रकी आवश्यकताअें क्या हैं। और तब किसानोंमें अनुपातके अनुसार अुनके अुत्पादनका बंटवारा किया जा सकता है।

अन्न-वसूलीवाले सरकारी कर्मचारी अतिरिक्त अनाजका दावा करें, अिसके पहले अिसकी पूरी जांच होनी चाहिये कि वह अतिरिक्त सचमुच क्या है? अेक सालके लिअे आवश्यक अन्न छोड़कर ही अतिरिक्तका हिसाब होना चाहिये। आजकी हालतमें यह नियम शायद बहुत अूंचा मालूम होगा। लेकिन जब तक हम कोअी अैसा नियम नहीं बनाते, तब तक अकालोंका निवारण करना असम्भव रहेगा।

'जमीनके अुपयोग' में कुछ आवश्यक चीजोंको पहला स्थान देनेका खयाल होना चाहिये। पहला स्थान स्थानीय जरूरतोंकी खेतीको मिलना चाहिये। निर्यातका अुत्पादन बादमें आयेगा। अिसी तरह यदि आवश्यक गुड़ और शक्कर ताड़-वृक्षोंसे मिल सकती हो, तो अच्छी जमीन पर गन्नेकी खेतीका निषेध होना चाहिये। आजकी स्थितिमें भी, यानी जमीनके अुत्तम अुपयोगकी दृष्टिसे, अुत्तरप्रदेश और बिहारसे गन्नेकी खेती दूसरी जगह हटायी जाय, अिसके पक्षमें माकूल कारण मौजूद हैं। शक्करका अुद्योग तो सरकारका मुंहलगा बच्चा जैसा हो गया है। अगर हमें खेतीमें 'रेशनलाअिजेशन' (समन्वय) जारी करना है, तो हमें अिस अुद्योगके लाभ-अलाभ पर निगाह रखकर अुसके साथ कड़ा बर्ताव करना होगा। शक्कर गरीबके आहारकी चीज नहीं है। और चाय आदि पेयोंमें जो शक्कर खर्च होती है, वह शरीरके पोषणमें नहीं जाती। अिसलिअे वह अेक राष्ट्रीय अपव्यय ही है। चाय पीनेकी अिस लतने शक्करकी मांगको बढ़ाया भी है। राष्ट्रीय अर्थ-विकासके हितमें हमें अैसे कितने ही सवालों पर पूरी तटस्थतासे विचार करना होगा।

अब अन्न-वसूलीकी बात लीजिये। अन्न-वसूलीके साथ कुछ दूसरी शर्तें भी होनी चाहियें: (१) लगान अनाजके रूपमें लिया जाय; (२) जितना अनाज वसूल किया जाय, अुसकी कीमत किसानको अुसके अुपयोगकी चीजोंके रूपमें मिलनी चाहिये। नहीं तो अैसा होता है कि अनाज तो सरकार अपनी तय की हुअी कीमतों पर अुनसे ले लेती है, और फिर अुन्हें बेसहारा छोड़ देती है, जिससे अपनी जरूरतकी चीजोंके लिअे अुन्हें लाचार होकर कालाबाजारकी शरण लेनी पड़ती है और नुकसान अुठाना पड़ता है।

योजनामें यह भी स्पष्ट नहीं हुआ है कि आजकी हालतमें, जब कि किसानोंको ज्यादा पैसा मिलनेके कारण नित्य व्यापारिक फसलोंका आकर्षण रहता है, अन्नकी खेतीकी तरफ खींचनेके लिअे अुन्हें क्या प्रेरणा दी जायगी।

अन्न-अुत्पादनके काममें सेना अपनी छुट्टीके समय बहुत कुछ कर सकती है। योजनामें अिस दिशामें सेनाकी सहायता लेनेका कोअी अुल्लेख नहीं किया गया है। भारतमें हमारा खेतीका मौसम कुछ ही महीनोंका होता है। सैनिक लोग बहुधा किसान-परिवारोंसे आते हैं, अतः अिन महीनोंमें अुनसे अपनी जरूरतका अन्न पैदा करनेका काम लिया जा सकता है। कुछ हद तक अैसा हो भी रहा है, लेकिन अिस कामको और तीव्र करनेकी आवश्यकता है। अुससे अेक दूसरा लाभ यह होगा कि सरकारका सैनिक-बजट कुछ कम हो जायगा। और यदि सैनिकोंको दूर-दूर बसाया जाय, और सेना अपने अुपलब्ध औजारोंका अुपयोग कनिष्ठ जमीन पर खेती करनेके लिअे करे, तो अन्नके अधिक अुत्पादनमें भी मदद होगी।

बेजमीन खेतिहर

योजनामें अुद्योगोंके मजदूरोंके सवाल पर, जिनकी संख्या बेजमीन खेतिहरोंकी सिर्फ दसवां हिस्सा है, काफी विचार किया गया है और अुसे बहुत जगह भी दी गयी है। अुद्योगोंके मजदूरोंकी तुलनामें बेजमीन खेतिहर मजदूरों पर शायद ही कोअी ध्यान दिया गया है। अिसलिअे अुनकी समस्याओं पर ज्यादा ध्यान दिया जाना चाहिये। खेतिहर मजदूरोंमें बहुतेरे तो आज भी लगभग गुलामी, या अर्ध-गुलामीकी हालतमें रह रहे हैं, और अुनके घर-मकान आदिकी व्यवस्था तो बहुत ही अनिश्चित है।

सिंचाअी

बड़े-बड़े बांध बांधने और नदियोंका नियंत्रण करनेकी तो अनेक भव्य योजनायें पेश की गयी हैं, लेकिन जमीनकी बरबादीसे संबंध रखनेवाली जमीनका साधारण विलयन, अूपरकी अुपजाअू सतहका बहना, आदि नित्यकी समस्यायें सुलझानेका शायद ही कोअी अुपाय बताया गया है। ये समस्यायें अलग-अलग रूपमें छोटी हो सकती हैं, लेकिन सबका जोड़ हमारी सारी बड़ी योजनाओंसे ज्यादा बढ़ जायगा। अिस सिलसिलेमें पहाड़ी झरनों और नालोंको जगह-जगह बांधनेकी कितनी ही योजनायें बननी चाहियें। अैसे अनेक छोटे-छोटे बांध बनाये जायं, तो धाराकी गति भी कम होगी और जगह-जगह नदियोंकी लायी हुअी अुपजाअू मिट्टी अिकट्ठी होगी, पानी बचेगा और पानीकी सतह (water-table) भी चढ़ेगी।

योजनामें अिस बातका भी विचार नहीं किया गया है कि अिन बड़ी योजनाओं पर, जिनका लाभ अभी बहुत दिन तक मिलनेवाला नहीं है, अितना ज्यादा पैसा खर्च करनेके परिणाम क्या होंगे। अिस तरफ तो भारी खर्च हो रहा है, और अुस तरफ कोअी अनुरूप अुत्पादन होता नहीं। अिससे मुद्रा बेहद बढ़ेगी और धनका विषम बंटवारा भी पैदा होगा।

सिंचाअी जब चालू हो जाय, तो पानीका मूल्य, जिस समय पानी लिया गया है अुस समय न लिया जाय, बल्कि फसल आने पर अनाजके रूपमें ही लिया जाय।

यातायात

सड़कोंके निर्माणकी अेक बड़ी योजना बनायी गअी है। लेकिन अिन सड़कोंसे लाभ किसे होगा, यह देखना चाहिये। पक्की सड़क बैलोंके बेनाल पांवोंके लिअे अेक आफत ही है। अगर मोटरवालोंको सड़कें चाहियें, तो मुनासिब है कि अुसके लिअे पैसा भी मोटरवालोंसे ही अिकट्ठा किया जाय। अिसके सिवा, गांवोंके दोनों तरफ करीब चार फर्लांग तक या तो टार रोड बनाअी जायं, या अुनकी अूपरी सतहको कड़ी बनानेका कोअी दूसरा अुपाय किया जाय, ताकि धूल न अुड़े। और यह खर्च भी मोटरवालोंसे ही वसूल होना चाहिये। जहां गांवोंके पाससे, या अुनके भीतरसे जानेवाली सड़कें अैसी न हों, वहां मोटरोंकी चाल पांच मील प्रति घंटेसे ज्यादा नहीं होनी चाहिये। छोटे शहरोंमें भी, जहां सड़कें धूल अुड़ानेवाली होती हैं, मोटरोंकी चाल पर अैसा नियंत्रण होना चाहिये। जनताके स्वास्थ्यके हितमें अैसे नियमोंका पालन सख्तीसे कराया जाना चाहिये। जैसा कि हम पहले बता चुके हैं, सड़कोंके निर्माणका यह कार्यक्रम भी बहुत कुछ बड़े अुद्योगोंके ही हितमें है।

नागरिक हवाअी आवागमन

नागरिकोंके लाभार्थ साधारण हवाअी यातायातके विकास पर काफी ध्यान दिया गया है। हमें याद रखना चाहिये कि बड़े-बड़े

www.vinoba.in

हवाअी अड्डे बनाकर अेक ओर हम देशको आन्तरराष्ट्रीय वायुमार्गोंसे जोड़ रहे हैं, तो दूसरी ओर अिसमें बाहरी हवाअी आक्रमणोंका खतरा भी छिपा हुआ है। अिस खतरेके खिलाफ हमारी कोअी तैयारी है, अैसा मालूम नहीं होता। यह ठीक है कि अैसी योजनामें सरकार देशके संरक्षणकी अपनी योजना प्रकाशित नहीं कर सकती। लेकिन सवालके अिस पहलू पर पूरा ध्यान होना चाहिये। अपनी योजनायें हम जब बनाते हैं, तब अपने साधनोंका खयाल भी हमें रखना चाहिये। हवाअी आवागमनके लिअे बहुत बड़ी मात्रामें पेट्रोलकी आवश्यकता होती है, और पेट्रोल तो हमारे देशमें है नहीं। अिसलिअे हवाअी आवागमनका विकास अेक हदके बाहर हुआ, तो हम बड़ी झंझटमें फंस जायंगे और संकटके मौके पर हमें कहींसे कोअी मदद नहीं मिलेगी।

जंगल

आज तक जंगलोंके विकासमें सरकारकी दृष्टि अुनसे होनेवाली आय पर रही है। अब भविष्यमें जंगल-विभागको भी जन-सेवाका ही महकमा मानना चाहिये। अिस दृष्टिसे जो बहुतसी बातें आज तक होती रही हैं और जिन्हें सिद्ध सत्यकी तरह मान लिया गया है, अुन्हें बिलकुल बदलना पड़ेगा। जनताके हितकी दृष्टिसे यह आवश्यक है कि जंगलसे जो भी अिमारती लकड़ी जाय, अुसे पहले पूरा पकाया जाय। पूरा विचार करके जंगलोंके विकासकी अेक योजना बनायी जाय, जिसमें जंगलोंकी अैसी सारी गौण पैदावारका खयाल भी हो, जो कअी महत्त्वके अुद्योगोंमें कच्चे मालकी तरह काममें आती है।

(अंग्रेजीसे) (अपूर्ण)

जो० कॉ० कुमारप्पा

किसान-संगठन या ग्राम-संगठन ?

किसानोंका संगठन होना चाहिये या नहीं, यह सवाल आज लोगोंमें पैदा हुआ है। और कुछ लोग कहते हैं कि जब मजदूरोंके संगठन होते हैं, मालिकोंके संगठन होते हैं, गुमास्तोंके संगठन होते हैं, व्यापारियोंके संगठन होते हैं, सभी आर्थिक या नौकरीपेशा वर्गोंके संगठन होते हैं, तो किसानोंका संगठन क्यों न हो?

बात तो सच है। पर सवाल यह है कि किसानका अर्थ क्या? किसानोंका संगठन यानी किनका संगठन? अुसमें कौन शरीक हो सकते हैं?

और अिस संगठनका अुद्देश्य क्या हो सकता है? जमीन पर दो तरहके हक माने जाने चाहियें — १. जमीनका मालिकी-हक; २. जमीनका जुताअी-हक। राज्यके विरासत संबंधी कानूनोंके मुताबिक जमीन पर अमुक लोगोंका मालिकी हक होता है। हमारे (बम्बअी) राज्यमें अुन्हें 'खातेदार' कहना ठीक होगा, क्योंकि 'जमींदार' शब्द जमींदारी पद्धतिवाले राज्य या प्रदेशके सामान्यतः बड़े खातेदारोंके लिअे काममें लिया जाता है। यद्यपि दोनोंमें अेक लक्षण समान है: दोनों तरहके जमीन-मालिक खुद खेती न करते हुअे साझीदार, वरसूद या किसान द्वारा खेतमें काम कराते हैं।

अिसलिअे जमीनके अुपयोगके सम्बन्धमें दो तरहके हक माने जा सकते हैं:

१. खातेदारका मालिकी-हक;

२. किसान या साझीदारका जुताअी-हक।

सच्चे ठोस अुत्पादनकी दृष्टिसे, जो समाजकी असल गरज है, दूसरा हक कुदरती है। पहला हक राज्यके कानून और मिल्कियत रखनेके विषयमें बने हुअे समाजके खयालों पर आधार रखता है। और अुस हद तक वह हक अिन खयालों और अुनके अनुसार बनते रहनेवाले कायदे-कानूनके मुताबिक घूमता या बदलता रहनवाला है। समाज-हितकी दृष्टिसे अैसा होना भी चाहिये।

ये दो प्रकारके हक यंत्रोद्योगोंके कारखानोंके संबंधमें पैदा होनेवाले पूंजी-हक और मजदूरी-हकसे मिलते जुलते हैं। यहां भी अेक तीसरा हक पैदा होता है, और वह है अेजन्टोंका व्यवस्था-हक। लेकिन अिस बारीकीको छोड़ें। हम किसानोंके संगठनका विचार कर रहे थे।

अूपर बताये दो हकदार वर्गोंमें से किसका संगठन करना है? आज जो संगठन होने लगा है, वह खातेदारोंका है। अपने मालिकी-हककी रक्षाके लिअे वह खड़ा हुआ है। क्योंकि साझीदारके जुताअी-हककी सुरक्षा तथा अुस कुचले हुअे वर्गके कल्याणके लिअे सरकारने कानून बनाया है। 'किसान' कहे जानेवाले, लेकिन असलमें 'खातेदारों' के संघ अिस कानूनका विरोध करनेके लिअे बनाये गये हैं, अैसा अब तो स्पष्ट कहा भी जाने लगा है। यह संगठन अधूरा है। वह खेतीके विकासके लिअे ही है, अैसा नहीं कहा जा सकता। अुसका मुख्य ध्येय तो यह है कि खातेदारोंका जमीन पर मालिकी-हक जैसा पहले था वैसा ही बना रहे।

फिर हमारे गांवोंकी रचना मुख्यतः खेतीके धन्धेके आसपास हुअी है। यानी केवल जमीन जोतनेवाला किसान ही नहीं, बल्कि जमीनवाला खातेदार, तरह-तरहके जरूरी ग्रामोद्योगोंमें लगी हुअी कुम्हार, लुहार, जुलाहा वगैरा जातियां, छोटा व्यापारी और सराफ — ये सब लोग वहां रहते हैं। खेती बिगड़े या निष्फल जाय, तो अिन सब लोगोंका जीवन अस्तव्यस्त-सा हो जाता है। अिसलिअे अिन लोगोंका भी खेतीसे सम्बन्ध रखनेवाले संगठनसे वास्ता है। ये भी अुसमें क्यों न होने चाहियें?

अिस तरह किसान-संगठन लगभग सारे गांवका संगठन हो जाता है। और अिसमें कोअी विचित्र बात भी नहीं है। हमारे देशकी संस्कृति ग्राम-संस्कृति मानी जाती है। कुटुम्ब-संस्थाके साथ अैसी ग्राम-जीवन संस्था हमारे राष्ट्रजीवनकी बुनियाद है। अुसके पीछे अेक खास अितिहास, खास जीवनदृष्टि और खास मानवताका दर्शन है। अिसलिअे किसानोंके संगठनका अर्थ गांवके सारे जीवनका संगठन मानना पड़े, तो कोअी आश्चर्यकी बात नहीं। अिस तरहसे संगठन करना हो, तो अुसका अर्थ यह हुआ कि गांवके सारे बालिग लोग — जात-पांत, लिंग, वगैराके भेदको छोड़कर — अुसमें शरीक हो सकते हैं। आज हमारा विधान भी हरअेक बालिग अुमरके व्यक्तिको मतका अधिकार देता ही है। अिसलिअे ये संगठन सारे मतदारोंके संगठन बन सकते हैं। अैसा होना अच्छा भी है। अुसमें गांवके हितके सारे पहलुओं पर समग्र दृष्टिसे विचार हो सकता है, सर्वोदयकी दृष्टिसे सबके हितका विचार किया जा सकता है। अिस तरह यह संगठन सारे गांवके हितके लिअे काम दे सकता है। अिसके बजाय अगर अलग-अलग हकदारोंके — यानी अलग-अलग आर्थिक हितोंवाले वर्गोंके — अलग संगठन बनेंगे, तो पुराने समयसे जड़ जमाये हुअे जात-पांतके संगठनोंके अलावा दूसरे नये बाड़े खड़े हो जायंगे। जात-पांतके मंडलोंकी बुराअीकी तरह यह नअी बुराअी पैदा होगी। अुसका नमूना युरोपके वर्ग-कलहके रूपमें हमारे सामने है। वैसा ही कलह गांव-गांव शुरू हो जायगा। किसान-संगठनके सम्बन्धमें यह सवाल बड़े महत्त्वका बन गया है। अिसका सच्चा हल हमें निकालना चाहिये।

अहमदाबाद, ४-८-'५१ **मगनभाअी देसाअी**

(गुजरातीसे)

www.vinoba.in

हरिजनसेवक

११ अगस्त १९५१

रचनात्मक कार्यकर्ता और चुनाव

अिसी अंकमें दूसरी जगह सर्व-सेवा-संघका निवेदन जा रहा है, जिसमें संघने चुनावके प्रश्न पर अपनी नीति और विचार प्रगट किये हैं। आशा है रचनात्मक कार्यकर्ताओंको, अुनकी रुचि चाहे जिस राजनैतिक पक्षके प्रति हो, यह निवेदन और अुसमें प्रकाशित विचार तथा नीति साफ, सन्तोषप्रद और पर्याप्त प्रतीत होगी। अुसमें अुन रचनात्मक कार्यकर्ताओंसे, जो राजनैतिक पक्षोंके सदस्य हैं, यह अनुरोध किया गया है कि वे अिस बातकी कोशिश करें कि अुनका पक्ष अपना टिकट अैसे ही लोगोंको दे, जिनमें चरित्र और योग्यता हो और जो साम्प्रदायिक वृत्ति या हिंसक अुपायोंके हामी न हों। हमारे करोड़ों मतदाताओंके लिअे किन्हीं दो दलोंकी विचार-धाराओं और कार्यक्रमोंमें क्या फर्क है, यह ठीक समझना मुश्किल है। लेकिन अैसी आशा की जा सकती है कि अुनके क्षेत्रसे जो अुम्मीदवार खड़े हों, अुनकी वैयक्तिक योग्यताका ज्ञान अुन्हें होगा। किसी पक्षने जो अुम्मीदवार खड़ा किया हो, अुसके चरित्र और योग्यताकी परवाह न करते हुअे, अुस पक्ष-विशेषको तुम अपना मत दो, अैसा मतदाताओंसे कहनेका कोअी संगत कारण नहीं हो सकता। अुन्हें अपना मत अुसी व्यक्तिको देना चाहिये, जिसका कि वे विश्वास कर सकते हों, न सिर्फ यह देखकर कि वह अेक प्रसिद्ध पक्षकी तरफसे खड़ा है। किसी समय यह कहा जाता था कि व्यक्ति कितना भी बड़ा क्यों न हो, कांग्रेस अुससे बड़ी है। यह बात किसी पक्षकी आंतरिक संघटनाके क्षेत्रमें सही हो सकती है। लेकिन जहां देशके कल्याणका सवाल है, वहां तो व्यक्तिकी योग्यताका मूल्य किसी राजनैतिक पक्षसे, फिर वह पक्ष कितना ही बड़ा क्यों न हो, ज्यादा महत्त्व रखता है।

लेकिन अिस सिलसिलेमें अेक बातकी, जिसका जिक्र अूपर आ चुका है, सावधानी अवश्य रखनी पड़ेगी। दुर्भाग्यवश हमारे देशमें धर्म और जातियोंके झगड़े चलते हैं, अहिंसाके बारेमें भी तरह-तरहके और परस्पर विरुद्ध मत हैं। अिसलिअे अैसी परिस्थितिमें कअी अैसे लोग भी हैं जो विद्वान, निष्ठावान और पवित्र हैं, तथा व्यक्तिगत लोभ, स्वार्थ, और आवेश आदि दोषोंसे मुक्त हैं, पर मानते हैं कि राजनीतिमें और सार्वजनिक कार्योंमें, किसी अभीष्ट धार्मिक, सांस्कृतिक, सामाजिक, या आर्थिक हेतुकी सिद्धिके लिअे नीचसे नीच अुपायोंका आश्रय लिया जा सकता है। वे खुद अेक चूहा भी नहीं मारेंगे और धन-स्त्री-शराब आदिके लोभोंमें नहीं फंसेंगे, लेकिन राजनैतिक विजयके लिअे वे अिन सब अुपायोंका प्रयोग करनेके लिअे तैयार हो जायेंगे। अैसी स्थितिमें व्यक्तिकी अपनी चारित्रिक पवित्रता अेक धोखेकी चीज हो जाती है, और जनताकी सुख-समृद्धिके लिअे संकट पैदा करती है। अैसे व्यक्ति जनताको भड़काकर अीसाको फांसी पर लटकाने, मंसूरको पत्थरसे मारने और गांधीको गोलीसे अुड़ा देनेके लिअे लोगोंको भड़का सकते हैं। तो मतदाताओंको मोहमें पड़कर अपना मत अैसे अुम्मीदवारोंको नहीं देना चाहिये, जिनकी चरित्रकी ख्याति तो है, लेकिन जिनकी जीवन-दृष्टि संकुचित और विकृत है।

अधिक ब्यौरेवार सूचनायें देना संभव नहीं। जैसे कि अेक पत्र-लेखक पूछते हैं कि जहां सब अुम्मीदवार अेकसे प्रामाणिक या अप्रामाणिक हों, वहां क्या किया जाय? अिसका तो यही जवाब हो सकता है कि अुसे अपने विवेकका अुपयोग करना चाहिये, या अपने मित्रोंके साथ विचार करना चाहिये और निर्णय करना चाहिये। अिसमें अुससे भूल हो जाय, तो खेदका कारण नहीं है; हर हालतमें दूसरोंकी सलाह पर निर्भर रहनेके बजाय तो यही बेहतर है कि वह भूल करनेका खतरा अुठाये।

अेक दूसरा प्रश्न यह है: क्या हम लोग, जो शांतिवादी हैं और युद्धमें विश्वास नहीं करते, अुम्मीदवारोंसे युद्धके रूपमें होनेवाली हिंसाका त्याग करनेके लिअे नहीं कहेंगे? कोअी शान्तिवादी राजनैतिक दल हो या शान्तिवादी स्वतंत्र अुम्मीदवार हो, तो अुसके पक्षमें मत-दाताओंको हमारी यह सलाह अुचित हो सकती है। लेकिन जब अैसा कोअी राजनैतिक पक्ष है ही नहीं, जो हर हालतमें युद्धके त्यागकी नीति स्वीकार करता हो, तो अिस प्रश्नका निर्णय हर कार्यकर्ता या मतदाताको खुद ही करना होगा।

अिस तरह अैसे कअी सवाल अुठाये जा सकते हैं, जिनका जवाब संघके निवेदनके निर्देशोंमें नहीं आया है। यदि ये सवाल महत्त्वके होंगे, और अुनका स्पष्टीकरण करना आवश्यक होगा, तो आशा की जा सकती है कि संघ अुनका स्पष्टीकरण करेगा ही। लेकिन यह समझ लेना चाहिये कि न तो यह शक्य है कि निर्देशोंकी अैसी परिपूर्ण और निर्दोष रचना हो कि भूलकी कोअी गुंजाअिश ही न रह जाय, और न यह अभीष्ट ही है कि हम अुनकी अैसी रचना करें कि कार्यकर्ताओं और मतदाताओंको अपनी बुद्धि चलानेकी आवश्यकता ही न रहे।

वर्धा, ३१-७-'५१ कि० घ० मशरूवाला

(अंग्रेजीसे)

रचनात्मक कार्यकर्ताओं और मतदाताओंको मार्गदर्शन

[अखिल भारत सर्व-सेवा-संघने अपनी २९ जुलाअीकी वर्धाकी बैठकमें राजकारण और चुनावके बारेमें नीचे लिखा निवेदन स्वीकृत किया है: —वल्लभस्वामी]

चूंकि सारी रचनात्मक प्रवृत्तियोंका अन्तिम लक्ष्य सर्वोदय, यानी सत्य, अहिंसा और विश्वकल्याणके आधार पर अहिंसक और शोषण-हीन समाजरचनाकी स्थापना है;

और चूंकि देशके विविध राजनैतिक पक्षोंने आगामी चुनावोंकी दृष्टिसे अैसे घोषणापत्र और कार्यक्रम जाहिर किये हैं, जो अेक-दूसरेसे ज्यादा भिन्न नहीं हैं और कुछ हद तक सभी सर्वोदयकी भाषाका प्रयोग करते हैं;

और चूंकि कअी रचनात्मक कार्यकर्ता अिस विषयमें सर्व-सेवा-संघसे स्पष्ट मार्गदर्शन चाहते हैं,

अिसलिअे अिस अवसर पर सर्व-सेवा-संघ अिन प्रश्नों पर अपने विचार और नीति नीचे लिखे मुताबिक जाहिर करता है:

१. सर्व-सेवा-संघ अिन विविध राजनैतिक पक्षोंके अिन घोषणा-पत्रों और कार्यक्रमोंमें से किसीको भी सर्वोदयकी स्थापनाके लिअे पर्याप्त नहीं पाता। और न अुसे यह भी विश्वास होता कि सत्ता मिलने पर ये कार्यक्रम भी पूरी तरहसे और कारगर रीतिसे अमलमें लाये जायेंगे। अिसलिअे संघ मौजूदा पक्षोंमें से किसीको भी अपनानेके लिअे तैयार नहीं है।

२. संघ विश्वास करता है कि सत्तासे दूर रहकर और मत-दाताओंकी निष्ठापूर्वक निःस्पृह सेवा करते हुअे जनतामें अेक अैसी राजनैतिक शक्ति पैदा की जा सकती है और मतदाताओंको अिस तरह मार्गदर्शन दिया और प्रभावित किया जा सकता है कि अिष्ट लोग ही चुने जायं।

www.vinoba.in

३. रचनात्मक कार्यकर्ता खुद सरकारकी बागडोर अपने हाथमें संभालें, यह सवाल तो तभी अुठ सकता है जब जनता खुद यह महसूस करे और कहे कि वह किसी औरको नहीं, रचनात्मक कार्यकर्ताओंको ही सत्तारूढ़ देखना चाहती है। लेकिन यह तो दूरकी बात है।

४. तब भी यह याद रखना चाहिये कि प्रचलित रचनामें सरकार और धारासभायें जनताके जीवनके हरअेक पहलूको छूती हैं और राष्ट्रकी पुनर्रचनाको प्रत्येक अवस्था और प्रत्येक स्तर पर आकार देती हैं। और यदि सरकार किसी अैसे पक्षकी हो, जिसका विश्वास अैसे राजनैतिक, सामाजिक और आर्थिक तंत्रमें है जो सर्वोदयकी दिशामें नहीं ले जा सकता, तो अैसी सरकार रचनात्मक कार्यक्रमके रास्तेमें रोड़ा बन जाती है और अनेक बाधायें पैदा करती है। अिसलिअे यद्यपि रचनात्मक कार्यकर्ताओंको अपने काममें अखंड रूपसे जुटे रहना चाहिये, लेकिन साथ ही अुन्हें अपनी समग्र सेवाके ही अेक अंगकी तरह देशकी राजनीति और योग्य शासनमें भी ज्ञानयुक्त दिलचस्पी रखनी चाहिये। और अिस हेतुसे अुन्हें मतदाताओंको भी अैसी तालीम देनी चाहिये कि वे अपने मतकी पवित्रता और बलको अच्छी तरह पहचानें, और सार्वजनिक जीवनकी शुद्धि और जनताके कल्याणके हितमें अुसका विवेकपूर्वक और कर्तव्यबुद्धिसे अुपयोग करना सीखें। अिसका यह अर्थ नहीं कि हरअेक रचनात्मक कार्यकर्ताको किसी राजनैतिक पक्षका सदस्य होना ही चाहिये। बेहतर तो यही होगा कि अुनमें से अधिकांश किसी भी राजनैतिक पक्षमें न रहें।

५. सर्व-सेवा-संघके सदस्य राजनीतिमें, चुनावों आदिमें सक्रिय भाग ले सकते हैं या नहीं, अुम्मीदवारकी तरह खड़े हो सकते हैं या नहीं, अिस सवाल पर संघ अपने ११ और १२ अक्तूबर १९५० के नीचे लिखे प्रस्तावको दुहराता है :

> "सर्व-सेवा-संघके पदाधिकारी तथा वैतनिक या अवैतनिक पूरा समय काम करनेवाले कार्यकर्ता चुनाव द्वारा प्राप्त होनेवाले किसी भी राजकीय बलके या सरकारी तंत्रके पदके लिअे खड़े नहीं हो सकेंगे। वे न तो बिना चुनावके ही पद स्वीकार कर सकेंगे और न चुनावके आन्दोलनमें ही सक्रिय हिस्सा ले सकेंगे।"

स्पष्ट है कि अूपरका प्रतिबन्ध अुन सदस्योंके लिअे लागू नहीं है; जो अूपर बताअी श्रेणीमें नहीं आते। वे लोग राजनीतिमें जैसा और जितना हिस्सा लेना ठीक समझें, अुतना लेनेके लिअे स्वतंत्र हैं। अलबत्ता, यह हिस्सा वे व्यक्तिगत तौर पर और यदि किसी रचनात्मक संस्थामें वे काम करते हैं, तो अुसके अनुशासनकी मर्यादाका पालन करते हुअे ही ले सकते हैं। अुनसे यह अपेक्षा तो की जायगी कि वे अपनी शक्तिभर रचनात्मक कार्यक्रमको आगे बढ़ायेंगे, फिर भी वे सर्व-सेवा-संघके प्रतिनिधित्वका दावा नहीं कर सकेंगे। बेशक, कुछ योग्य रचनात्मक कार्यकर्ताओंका स्वतंत्र रीतिसे या किसी राजनैतिक पक्षके सदस्योंकी हैसियतसे राजनीतिमें भाग लेना रचनात्मक कामके हितमें वांछनीय भी हो सकता है। और अैसे अवसर भी आ सकते हैं जब कि हरअेक रचनात्मक कार्यकर्ताको रचनात्मक कामकी बुनियादी निष्ठाकी रक्षाके लिअे ही कोअी राजनैतिक आन्दोलन अुठाना पड़े। लेकिन फिलहाल यह सवाल खड़ा नहीं होता।

६. अिस तरह यह वांछनीय नहीं है कि सर्व-सेवा-संघ अेक राजनैतिक पक्षकी तरह काम करने लगे। लेकिन संघ चाहता है कि वे रचनात्मक कार्यकर्ता, जो किसी राजनैतिक पक्षके सदस्य हैं, अुस पक्ष पर अिस बातके लिअे अपना पूरा जोर डालें कि वह सिर्फ प्रामाणिक, निःस्पृह और सुयोग्य लोगोंको ही खड़ा करे। अपनी धारासभाओंका और सुशासनके लिअे अुत्तरदायी अधिकारियोंका नैतिक स्तर हम सिर्फ अिसी तरह अूंचा अुठा सकते हैं। और मतदाताओंसे संघकी सलाह है कि वे किसी अैसे अुम्मीदवारको अपना मत न दें, जो अुनकी रायमें सार्वजनिक जीवनकी आवश्यक पवित्रताकी मर्यादा तक नहीं पहुंचता, चाहे वह अुसी दलकी ओरसे खड़ा किया गया हो जिसके साथ मतदाताकी निजी सहमति है। अुन्हें यह भी याद रखना चाहिये कि किसी सांप्रदायिक वृत्ति रखनेवाले, या अपने साध्यकी सफलताके लिअे हिंसक अुपायोंमें विश्वास रखनेवाले अुम्मीदवारको अपना मत देनेकी बात तो सोची भी नहीं जा सकती, क्योंकि अैसी वृत्ति सर्वोदयके अुसूलोंके अेकदम खिलाफ है।

शहरोंकी ओर ?

देशकी संस्कृति किस तरफ जा रही है या मुड़ रही है, अिसकी अेक कसौटी यह हो सकती है कि आबादीका प्रवाह किस तरफ जा रहा है। गांवोंकी आबादी गांव छोड़कर क्या शहरोंमें जा रही है ? या गांवोंका धन, बुद्धि, वगैरा गांवमें ही रहते हैं और अुन्हें खुशहाल बनाते हैं ? अुदाहरणके लिअे, पिछले कुछ दशकोंसे जापानकी बहुतसी आबादी अुसके ५-७ बड़े शहरोंमें अिकट्ठी हो गअी है। ये शहर नये जापानके अुदय होनेसे खड़े हुअे हैं। और अिसका कारण है नये जापान द्वारा अपनाअी हुअी यंत्रोद्योगी संस्कृति।

हमारे देशमें भी नअी जन-गणना कुछ हद तक अिससे मिलता लक्षण ही बताती है। हमारे यहां शहर बढ़ते जाते हैं। शहरोंमें रहनेवाली गरीब आबादी ज्यादातर कारखानोंके मजदूरोंकी ही होती है, क्योंकि शहर यंत्रोद्योगोंकी वृद्धिके आसपास ही बढ़ते हैं। अुद्योग-धन्धों, सरकारी नौकरी, बैंक-सराफी, आयात-निर्यातके व्यापार, वगैराके जोर पर शहर पनपते हैं। शहरोंके साथ अुनकी गरीब मजदूर-आबादी पर भी जरूरतसे ज्यादा ध्यान दिया जाता है। यह सच है कि शहरोंमें यह बस्ती अितनी गन्दी और बुरी होती है कि अुसकी तन्दुरुस्तीकी तरफ ध्यान देना पड़ता है। परन्तु देशके लाखों गांवोंमें सड़नेवाली बड़ी गरीब आबादीके प्रश्नोंकी तरफ तुलनामें कम ध्यान दिया जाता है। फिर, शहरी बस्ती संगठित होती है; अैसा करनेमें वह जल्दी सफल भी होती है। और प्रत्यक्ष क्षेत्रमें अुसका संगठन तुरन्त काम भी देता है, यह अुसका आकर्षण होता है। अिसके फलस्वरूप मजदूर-संगठन देशव्यापी कार्य हो जाता है। अुसे देखते हुअे गांवोंकी आबादीका क्या संगठन है ? यह प्रश्न सचमुच कठिन है कि गांवोंकी अिस बड़ी भारी आबादीका संगठन किस मुद्दे पर और किस ढंगसे किया जाय। लेकिन अिस कारणसे वह प्रश्न छोड़ा तो जा ही नहीं सकता; बल्कि अुस पर विशेष ध्यान देनेकी जरूरत है। क्योंकि गांवोंकी आबादी शहरोंमें खिंचती रहे, और गांवोंमें अुद्योग-धन्धा न मिले — न बढ़ता रहे, वहांकी आबादीको वहीं रहकर अपना विकास करने और कामधन्धा करनेका मौका न मिले, यह भयंकर बात कही जायगी।

आबादीकी अैसी घट-बढ़की कसौटीकी दृष्टिसे सरकारकी पंच वर्षीय योजना कैसा असर पैदा करेगी, यह भी हमारे योजना बनानेवालोंको देखना चाहिये।

अेक पत्रलेखक भाअी बम्बअीका अुदाहरण देकर यह लिखते हैं कि हमारे शहरोंका फूलता जाना देशके लिअे अच्छा लक्षण नहीं है। अूपरकी दृष्टिसे अुनकी यह बात ध्यान देने लायक है। वे लिखते हैं :

> "बम्बअीमें २८ लाख आदमियोंके भर जानेसे मकानोंकी भयंकर तंगी पैदा हुअी। दूसरी भी कअी मुसीबतें बढ़ीं। दूध जैसी चीजके भी छोटे-छोटे महकमे खोलने पड़े। लेकिन ये २८ लाख आये कहांसे ? कैसे आये ? अिस सवालका कोअी अध्ययन करता है ? अुसकी जड़ तक पहुंचनेका प्रयत्न

www.vinoba.in

भी किया जाता है? सिर्फ अेक ही जगहकी शक्तिसे अधिक जिम्मेदारियां पूरी करनेके लिअे कर बढ़ाना और बजट बराबर करना — यही पद्धति क्या अर्थ-तंत्रकी कुंजी कही जायगी? आयात-निर्यातके व्यापारमें जब भारतका पासा अुलटा पड़ता है, तब अर्थमंत्रीको दौड़धूप करनी पड़ती है, अनेक अुपाय करने पड़ते हैं, अनेक नीतियां बदलनी पड़ती हैं। लेकिन जब भारतके हर प्रान्तके गांव खाली होकर शहर ही भरें और गांवोंको काफी घाटा या नुकसान हो, तब अर्थ-तंत्र न सिर्फ अिसे रोकनेमें कोअी हिस्सा ही न ले, बल्कि अर्थमंत्रीको अिस दुःखद स्थितिका खयाल भी न आये, यह विचारणीय बात है।"

वे भाअी सुझाते हैं:

"आज बम्बअी, मद्रास और कलकत्ता जैसे शहरोंमें ही जो अुद्योग-धन्धे खोले जाते हैं, अुन्हें बिलकुल बन्द कर देना चाहिये। अिसके बदले हर प्रान्तके गांवोंमें सुविधाके मुताबिक अुन्हें जगह-जगह कायम करनेकी ही अिजाजत देनी चाहिये, ताकि हर प्रान्तकी जनता बड़े शहरोंकी नारकीय यातनाओंसे छूटकर अपने गांवोंमें लौट सके। दूसरे, राष्ट्रकी संपत्ति भारतके कोने-कोनेमें फैली हुअी और अखण्ड रहेगी और लड़ाअीके समय पद-पद पर शहरों पर झूमनेवाला अत्यधिक डर कम होगा।"

अैसा ही नहीं, समग्र दृष्टिसे देखने पर भी शहरोंकी तरफ सहज ही खिंचनेवाली नजर और राष्ट्रीय सम्पत्तिका प्रवाह बदलना चाहिये। क्योंकि, जैसा वे भाअी कहते हैं:

"जगतके समृद्ध देशोंमें हमारा देश कमसे कम आमदनी-वाला और कमसे कम शिक्षित है। बहुत थोड़ी संख्यावाले धनी वर्गको छोड़ दें, तो अुसमें मध्यम वर्ग और गरीब वर्ग ये दो ही वर्ग हैं। पहला मध्यम वर्ग अपनी जरूरतें, कअी जरियोंसे, बड़ी मुश्किलसे पूरी करता है और खास करके शहरोंमें रहता है या आकर बस गया है। जब कि दूसरा वर्ग मुख्यतः भारतके सात लाख गांवोंमें फैला हुआ है, जो शिक्षा, डॉक्टरी मदद या शहरों जैसे किसी भी लाभसे वंचित रहकर सिर्फ जीनेके खातिर ही दयावनी हालतमें दिन काट रहा है। अुसकी यातनाओंका खयाल बम्बअी, मद्रास या कलकत्ता जैसे शहरोंमें आना कठिन है। जो भोगता है, अुसीको अुसका खयाल आता है। अिसमें आज तककी पराधीनताको छोड़ दें, तो स्वतंत्र भारतमें यह स्थिति कैसे बरदाश्त की जा सकती है? अिस बारेमें पहला फर्ज अुस पार्टीका है, जिसके हाथमें देशके शासनकी बागडोर है।"

अूपर बताअी हुअी दृष्टिसे देखने पर सरकारकी योजना देशको किस तरफ ले जाती है, अिसका अुसे विचार करना चाहिये। अिसका विचार किये बिना योजना बनाअी जाय, तो वह देशके लोगोंके अनुकूल नहीं होगी; और यह चीज भी अुसकी सफलतामें रुकावट डाल सकती है।

अहमदाबाद, २-८-'५१
(गुजरातीसे)

मगनभाअी देसाअी

पूनामें नवजीवनके प्रकाशन

हमने पूनाकी अपनी शाखा बन्द कर दी है और सुलभ राष्ट्रीय ग्रन्थमाला, तिलक रोड, पूना २, को हमारी बिक्री-अेजेन्सी दे दी है। आगेसे हमारे गुजराती, हिन्दी, मराठी और अंग्रेजीके सारे प्रकाशन ग्राहकोंको अूपरके पते पर मिल सकेंगे।

अहमदाबाद, ७-८-'५१

जी० देसाअी
व्यवस्थापक
नवजीवन कार्यालय

शिवरामपल्लीमें विनोबा

९

(७) ता० ११-४-'५१ को सुबह महाराष्ट्रके कार्यकर्ताओंके साथ:

मैंने महाराष्ट्रकी तरफ विशेष ध्यान नहीं दिया, नहीं देता। महाराष्ट्रमें विशेष घूमता नहीं, बाहर ही घूमा करता हूं; अैसी बहुतसे लोगोंकी शिकायत है। दूसरे प्रान्तोंकी अपेक्षा महाराष्ट्रका मुझ पर ज्यादा अधिकार है, यह मुझे मान्य है। परन्तु मैं महाराष्ट्रकी ओर ध्यान नहीं देता, यह कहना ठीक नहीं है।

मैंने जो कुछ चिन्तन-मननपूर्वक लिखा है और आजकल भी लिखता हूं, वह सब मराठीमें ही लिखा है और लिखता हूं। अितनेसे मैंने अपना कर्त्तव्य कर दिया, अैसा मैं मानता हूं। यह पक्षपात मैं जान-बूझकर करता हूं, अैसा नहीं है। अेक संस्कृतको छोड़कर मैंने अुतना अध्ययन दूसरी किसी भी भाषाका नहीं किया है, जितना कि मराठी भाषाका किया है। मुझे लगभग दस-बारह भाषाअें मामूली तौर पर आती हैं। अुनका ज्ञान रुपयेमें चार पैसे बराबर है। परन्तु मेरे दिमागमें मूल विचार मराठीमें ही आता है। अुसी भाषाके आधारसे चिन्तन होता है। मनुष्यका सारा हृदय अुसके चिन्तनयुक्त लेखमें से व्यक्त होता है। अिस प्रकार मेरा हृदय मराठीमें से व्यक्त होता है। अितनेसे मेरा कर्त्तव्य पूरा होता है या नहीं, अिसका निर्णय आप ही कीजिये। अिसके अलावा, पिछले तीस वर्षोंमें मेरा कार्यक्षेत्र मराठी प्रदेशमें ही रहा है, यह बात भी ध्यानमें रखने योग्य है। यह क्षेत्र बुद्धिपूर्वक नहीं चुना है, सहज गतिसे प्राप्त हुआ है।

हमारी दोष-विस्मरणशीलता

महाराष्ट्रके लोगोंको अेक-दूसरेके लिअे प्रेम और अभिमान रखना हो, तो अेक-दूसरेके दोषोंकी जिम्मेदारी भी स्वीकार करनी चाहिये। हमारे विषयमें अन्य प्रान्तीयोंके मनमें कुछ गैरसमझ है और कुछ-कुछ दोषोंका हम पर आरोप भी किया जाता है। अुनमें से कुछ दोष गलतीसे भी हमारे माथे जड़ दिये गये हों, यह संभव है। परन्तु बाहरके लोगोंको हमारे कुछ दोषोंका जो अुचित भान है, वह वस्तुतः हमें ही ज्यादा होना चाहिये। कुल मिलाकर भारतके लोग बड़े ही क्षमाशील और दोष-विस्मरणशील हैं। यह दोष-विस्मरणशीलता यदि हममें न होती, तो अीसा मसीहकी हत्याका पाप जैसे युरोपमें दो हजार वर्षोंके बाद भी अब तक खल रहा है, अुसी तरह गांधीकी हत्याका पाप दूसरे प्रान्तीयोंके मनमें खलता रहता। परन्तु गांधी हत्याविषयक क्रोध दिन-दिन कम होता हुआ दिखाअी देता है, और कुछ समयके बाद लोग, यह समझकर कि गांधीका खून करनेवाला कोअी पागल था, अुसे पूरी तरह भूल जायंगे।

यही स्थिति अंग्रेजोंके विषयमें भी पायी जाती है। अंग्रेजोंने हम पर बेहद अत्याचार किया और हमने अुनसे लड़कर स्वातंत्र्य प्राप्त किया। फिर भी आज अुनके विषयमें हम लोगोंमें ज्यादा द्वेष-बुद्धि नहीं है। अिसका अेक कारण गांधीजीकी सिखावन तो है, फिर भी मुख्य कारण यह दोष-विस्मरणशीलता ही है। यह देश बहुत अनुभवी होनेके कारण ही अुसके स्वभावमें यह दोष-विस्मरण-शीलता आयी है, अैसा मैं समझता हूं। वह हरअेक कदम विवेकसे रखता है। वह अपना विवेक आसानीसे नहीं खोयेगा और न किसीके पीछे सहसा अेकदम जायगा। नया सुधार भी वह जल्दी ग्रहण नहीं करेगा। हमारी जनता बड़े-बड़े राजाओंके अुपकार नहीं मानती। परन्तु छोटे-बड़े साधु-सन्तोंका स्मरण बनाये रखती है।

आन्तरदेशाभिमान

मेरे मनमें यह बात जम गअी है कि खेतीका पहला शोध भारतवर्षमें ही हुआ होगा। अिस खेतीके शोधके कारण ही भारत-भूमि पुण्यभूमि मानी गयी। पुराने जमानेमें, अितिहासके पूर्वकालमें,

www.vinoba.in

अिस देशमें संघ राज्य हो गये। अिसलिअे भारतका देशाभिमान आंतरदेशाभिमानके स्वरूपका, यानी बहुत ही व्यापक है। परंतु वृत्ति अुदार होने पर भी हमारी वृत्ति अुदात्त नहीं थी। अिसलिअे हमें अपने पारतंत्र्य पर अितनी तीव्र चिढ़ नहीं हुअी।

आज राजनीति जीवनव्यापी हो गअी है। यदि जीवित रहना हो, तो अुससे बच नहीं सकते। अिसलिअे चाहे सज्जन लोग अुसमें सक्रिय भाग न लें, तो भी अुन्हें अुसके विषयमें सावधानता, चिन्तन और अुस पर असर करने लायक दृढ़ता रखनी चाहिये। आजकी सरकारके खिलाफ जनताकी कअी शिकायतें हैं। परंतु अुसके प्रति आदर नहीं है, अैसी बात नहीं। आज भी जवाहरलाल नेहरू जहां-जहां जाते हैं, वहां लाखों लोग जमा होते हैं और व जो कहें, वह करनेको तैयार हो जाते हैं। फिर भी हमारी जनता अनुभवी होनेके कारण बहुत ज्यादा अुत्साह नहीं दिखा सकती।

अेक बहुत अच्छा लक्षण

अुसी तरह साबित दिमागके आदमी हमारे देशमें जितने हैं, अुतने दूसरे देशोंमें नहीं होंगे, अैसा मुझे लगता है। यह लक्षण बहुत अच्छा है। अिसलिअे हमारे देशमें बहुत आन्दोलन नहीं होते। आकाश व्यापक होता है। वह आन्दोलन नहीं करता। लेकिन दूसरोंके आन्दोलनोंको अवकाश देता है। अिसके विपरीत फूंकनीकी हवा संकीर्ण होनेके कारण बड़े-बड़े आंदोलनोंको जन्म देती है। हमारी जनताका मन अनुभवीपनके कारण व्यापक बन गया है। देहातकी जनताके सामने जगत् और देशके विषयमें व्याख्यान दें, तो अुसे जगद् भावना ही अधिक प्रिय लगती है। अब अिस व्यापकताको अेक फूंकनीमें भरकर सक्रियता पैदा करनी चाहिये।

स्थूल विचारकी आदत

पिछले तीन-चार सौ वर्षोंमें महाराष्ट्रमें आम जनताको छोड़कर, करीब सभीको अत्यन्त स्थूल विचार करनेकी आदत लग गअी है। जब स्थूलका विचार सूक्ष्मको छोड़कर होता है, तो वह जड़को छोड़कर पेड़का विचार करनेके बराबर होता है। अिसलिअे वह सम्यक् विचार नहीं हो सकता। ज्ञानेश्वरीकी गहराअी हमसे नहीं सम्हलती। अितनी गहराअीमें पैठने पर हम निष्क्रिय बन जायेंगे, अैसा डर हमें लगता है। अिसलिअे पाश्चात्योंके छिछलेपनके अनुकरणकी वृत्ति हमारे भीतर बढ़ रही है। वैसे महाराष्ट्रमें गीताका जितना अध्ययन हुआ है और हो रहा है, अुतना दूसरे किसी प्रान्तमें नहीं होता होगा। अिधर गांधीजीके कारण गुजरातमें गीताका अध्ययन बढ़ा है, यह बात अलग है। परन्तु हम अुसका अर्थ बहुत ही स्थूल रीतिसे करने लग हैं। अुदाहरणार्थ, 'ये यथा मां प्रपद्यन्ते,' अिस श्लोकका अर्थ 'जैसे से तैसा' न्यायका बोधक है, अैसा आज तक किसीको नहीं लगा। अिस तरहकी टीका किसीको नहीं सूझी। क्योंकि 'जैसे से तैसा' का मतलब है अपना 'अिनीशिअेटिव' दूसरेके हाथमें दे देना। वह जैसा नाचेगा वैसा हमको नाचना चाहिये, वह टेढ़ा हो तो मुझे भी टेढ़ा बनना चाहिये, अैसा मानना है। फिर भी अुस श्लोकमें से अब 'जैसे से तैसा' अर्थ निकाला गया है। पहले पारतंत्र्यकी खीझ व्यक्त करनेके लिअे अैसा अर्थ करनेमें आया, यह मान लें तो भी आज 'नरम' और 'गरम' दोनों प्रवृत्तियोंके लोगोंको वही अर्थ ठीक प्रतीत होने लगा है। यह चिन्ताजनक बात है। 'ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्' वाला श्लोक मनुष्यके साथ मनुष्यको कैसे बरतना चाहिये, अिसकी दृष्टि देता है। 'आवडीचें दान देतो नारायण' — भगवान् हम जो चाहते हैं, वह देता है — यह सूचना अुस वाक्यमें है।

हमारे यहां 'हमारी संस्कृति' कहते ही मध्यम वर्गको पेशवाअीकी जितनी याद आती है, अुतनी ज्ञानेश्वर-अेकनाथकी नहीं आती। जो लोग कहते हैं कि अहिंसा हमारे रक्तमें नहीं है, वे अपने पूर्वजोंको पहचानते नहीं हैं। वस्तुतः ज्ञानेश्वरका अुस समयके लोगोंने अतिशय अुत्पीड़न किया। अुनका बहिष्कार भी किया। लेकिन अुन्होंने लोगों पर जरा-सा भी दोष लगाया हो, या अुन्हें भला-बुरा कहा हो, अथवा अुनके विषयमें अेक भी कटु अुद्गार निकाला हो, अैसा अुदाहरण अुनके साहित्यमें नहीं पाया जाता। ज्ञानेश्वरीमें अेक भी कटु शब्द खोजे नहीं मिलता। अहिंसाके अुत्तम आचार्य महात्मा गांधी और टॉलस्टॉयके लेखोंमें भी अनेक कटु शब्द मिलते हैं। अीसा मसीहने भी अुन्हें सतानेवाली जनताकी तीव्र शब्दोंमें निन्दा की है। परंतु ज्ञानेश्वरके साहित्यमें अेक भी कटु शब्द नहीं मिलता। अिसलिअे महाराष्ट्रकी जनताको अीसाअियोंसे भी अधिक अहिंसाकी बालघूटी मिली है, अैसा मैं कहता हूं। अुसी प्रकार सत्याग्रहका अुत्तम नमूना अेकनाथने अपने जीवनमें दिखा दिया है। अिस तरह सत्य और अहिंसा ये दोनों तत्त्व हमारे लिअे नये नहीं हैं। महाराष्ट्रीय संतोंने हमें वे पहले ही सिखा दिये हैं।

हमारे बड़े-बड़े आदमी किस तरह छिछला विचार करते हैं, यह देखने पर मन अुद्विग्न हो जाता है। श्री मा० श्री० अणेने अेक बार कहा था: "विवाह कैसे होते हैं, अुनके मूलमें कौनसी भावनायें होती हैं, अुनमें कितना अध्यात्म होता है, आदि आप रवीन्द्रनाथसे पूछिये। हम वह तत्त्वज्ञान नहीं जानते। फिर भी पीढ़ियोंसे हमारी शादियां होती ही आयी हैं।" मानो विवाहके पीछे छिपी हुअी सूक्ष्म भावनाका विचार करनेकी जरूरत नहीं है। अिसीको 'वस्तुवादी' या 'स्थूल' वृत्ति कहना चाहिये। परन्तु हम यदि केवल स्थूल दृष्टिसे ही देखने लगें, तो हमारे हाथों महत्त्वके काम कभी नहीं होंगे।

सारांश, हम यह स्थूल वृत्ति छोड़ें, तभी महाराष्ट्रसे कुछ काम हो सकेगा। अहिंसाके विषयमें विचार करते समय हम 'गांधीकी अहिंसा' कहते हैं। लेकिन अहिंसा कोअी गांधी अकेलेकी मिल्कियत नहीं है। जो कोअी अुसके विषयमें विचार तथा आचार करेगा, अुसीकी वह है। अुसके लिअे पहले मताधिक्य होना चाहिये, अैसा माननेका कारण नहीं। हम अपनी साधना करते रहें। हमको अपनी साधना करते रहना चाहिये। मताधिक्य (मेजॉरिटी) की चिन्ता हम न करें। मैं अल्पमत (माअिनॉरिटी) में हूं, अिसकी मेरे मनको लाज क्यों हो? और बहुमत (मेजॉरिटी) में जानेकी मुझे जल्दी क्यों हो? मुझे लोगोंसे यही कहना है कि जब सारी दुनिया थक जायेगी, तब नेतृत्व अुन्हींकी ओर आयेगा, जिन्होंने अहिंसाका विकास किया होगा।

अिस विचारका पोषण यदि हम करेंगे, तो देरसे ही क्यों न हो, संसारका शाश्वत नेतृत्व हमें मिलेगा, अैसी श्रद्धा हमारे भीतर होनी चाहिये। 'तुरत दान महापुण्य' की पद्धतिका अशाश्वत नेतृत्व किस कामका? हमारी बात बहुतसे आदमी सुनें, अैसा हम चाहते हैं। लेकिन हमें 'बहुतसे' चाहिये, या 'आदमी' चाहिये? 'बहुतसी' चाहियें तो भेड़ें भी मिलेंगी। परन्तु 'आदमी' चाहिये, तो धीरजसे काम लेना चाहिये। झटपट नेतृत्वके पीछे पड़नेमें कोअी तथ्य नहीं। हिंसासे कभी भी कल्याण नहीं होगा, यह पहचानकर हमें अहिंसाके मार्ग पर चलाना चाहिये। सूर्योदय होते ही सारे तारोंको जाना पड़ता है। अिसलिअे हमें सूर्योदयकी तैयारी करनी चाहिये। आज चुने जाकर अगले साल धक्का खानेके बदले हमें अैसी स्थिति निर्माण करनी चाहिये कि हमारे चुने जानेके बाद फिर चुनावकी जरूरत ही न रहे। वस्तुतः सर्वोदय-समाज कोअी बहुत बड़ी संस्था नहीं है। परंतु युरोप-अमेरिकाके लोग अुससे मार्ग-दर्शनकी अपेक्षा रखते हैं। अिसका अर्थ यह कि सारे जगत्का प्रवाह अेक ही केंद्रकी तरफ जा रहा है। आज अुस केन्द्रके पास हमारे सिर न हों, तो पैर तो हैं ही। यह कोअी कम समाधानका विषय नहीं है।

योजनारहित सरकार

फिर वर्तमान शासकोंका अदूरदर्शी और योजनारहित व्यवहारका जिक्र करते हुअे विनोबाने आगे कहा:

अब देखिये, दो विश्वयुद्ध हो गय। तीसरा अगर टलनेवाला ही न हो, तो आप लोगोंने क्या तैयारी कर रखी है? क्या हमारी

www.vinoba.in

फौज तैयार होनेसे हम तैयार हैं, अैसा समझा जायगा? भैया (दरबान) के तैयार रहनेसे मालिक तैयार है, अैसा नहीं कहा जाता। हमारे यंत्र खराब हैं, सत्रह गज कपड़ेसे हम बारह गज पर आ गये हैं। और अगर तीसरा युद्ध भी आ जाये, तो कपड़ेकी कमी न रहे अिसके लिअे क्या आप फौजी भरतीकी तरह सूत-कताअी अनिवार्य करनेवाले हैं? लेकिन अिसका तो कोअी विचार ही नहीं करता। पट्रोल पर आपकी सारी योजनायें निर्भर हैं। लेकिन घड़ीभरके लिअे पेट्रोल नहीं है, यह समझकर क्या कभी आप सोचते हैं?

आबादीकी समस्या

आज हमारे राज्यकर्ता लोकसंख्या अधिक न बढ़ने देनेका हमें अुपदेश देते हैं। परन्तु हमको अुनसे कहना चाहिये कि लोकसंख्या कम करनेके बारेमें व्याख्यान देनेके लिअे हमने तुम्हें राज पर नहीं बैठाया है। जितने आदमी देशमें हों, अुन सबको अन्न-वस्त्र देनेकी जिम्मेदारी तुम्हारी है।

क्या आप यह समझते हैं कि पृथ्वी पर निर्माण होनेवाले लोगोंका पृथ्वीको बोझ होता है? अगर बोझ होता होगा, तो पृथ्वी अुसकी योजना भी कर लेगी। क्या भूकंप नहीं होते? लेकिन पृथ्वीको संख्याका भार नहीं हुआ करता, पापका भार हुआ करता है। अिसलिअे पाप कैसे कम होगा, अिसका विचार हमें करना चाहिये। पुण्यसे पैदा होनेवाले प्राणी पुण्यात्मा होते हैं। अुनका भार पृथ्वीको नहीं होता। अीश्वरकी योजना अैसी सुंदर है कि अेक मुंहके बढ़ते ही अुसके साथ दो हाथ भी पैदा होते हैं। भारतकी लोकसंख्या छत्तीस करोड़ हो गअी, छत्तीस करोड़ मुंह खानेवाले पैदा हो गये, अिसके लिअे रोते बैठेंगे या बहत्तर करोड़ हाथ काम करनेके लिअे अुत्पन्न हो गये, अिसके लिअे आनन्द मनायेंगे? अिसके बदले दो मुंह और अेक हाथ अैसी योजना होती, तो कैसा अनर्थ सिर पर आ पड़ता, अिसकी कल्पना कीजिये। तब सद्यस्थितिके लिअे दुःख नहीं होगा। अिसलिअे संख्यावृद्धिसे न डरें। मेरे घरके आदमियोंको भरपेट खिलाने लायक बुद्धि मुझमें होनी चाहिये। आजकी लोकसंख्या पापकी बदौलत बेतहाशा बढ़ रही है। अुस पापका नाश कीजिये, तो लोकसंख्याका डर आपको नहीं लगेगा।

संयमका गलत अर्थ

कुछ लोग संयमसे संतति-नियमन करो, अैसा प्रतिपादन करते हैं। लेकिन यह ठीक नहीं है। संयमका अपना स्वतंत्र मूल्य है। संतति कम करनेके लिअे संयमको न खपाअिये। अिसके सिवा, संयम सन्तानके कम या ज्यादा होने पर निर्भर नहीं होता। सालमें अेकाध बार स्त्री-पुरुष संबंध हो जानेसे भी प्रजोत्पत्ति हो सकती है। अिसलिअे अैसे व्यक्तिको असंयमी समझनेका कारण नहीं है। अिस दृष्टिसे अेकाध बीस बच्चोंका बाप भी दो बच्चोंके बापसे ज्यादा संयमी हो सकता है। संयमसे आनन्द मिलता है। अिसलिअे संयमी होनेको लोगोंसे कहिये। अुसके लिअे भौतिक नफा-नुकसान न सिखाअिये। सन्ततिनिष्ठ बनिये। सन्ततिको देवता मानिये। तभी आप अिस समस्याको अपने आप हल कर सकेंगे।

सारी दुनियामें प्रलय होने पर भी 'मार्कंडेय अेकाकी तैरता है।' वैसा ही अहिंसाका यह विचार है। हमारी वृत्ति भी वैसी ही बननी चाहिये। अिस अहिंसक विचारका पोषक गीतामें कुछ होगा तो वह टिकनेवाली है, अैसा हमें अुसे बतलाना चाहिये। आज गीता स्वयं तराजूमें है।

('सर्वोदय' से) दा० मूं०

रचनात्मक कार्यक्रम

लेखक — गांधीजी

अनु० — काशिनाथ त्रिवेदी

कीमत ०–६–० डाकखर्च ०–२–०

नवजीवन कार्यालय, अहमदाबाद–९

ताड़-गुड़

केन्द्र तथा प्रान्तकी सरकारें, अुनके ताड़-गुड़ सलाहकार श्री गजानन नायक और अुनके द्वारा तैयार किये गये कार्यकर्ता हमारी बधाअीके पात्र हैं कि अुन्होंने हमारे लिअे अेक बढ़िया ग्राम-अुद्योग और गृह-अुद्योग खड़ा कर दिया है। श्री नायक तो विशेष धन्यवादके पात्र हैं। यह अुनका प्रेमका परिश्रम है, और अपनी सारी सेवा वे निःस्वार्थ वृत्तिसे करते हैं। हमारी सरकारमें वही अेक अैसे कार्यकर्ता हैं, जो अपनी सेवाअें सिर्फ भोजन और वस्त्र लेकर दे रहे हैं। अुनका यह आदर्श अुदाहरण सरकारी क्षेत्रोंमें और अुसके बाहर भी कअी लोगोंकी आंखें खोलने योग्य है।

अिस अुद्योगकी श्रेष्ठता यह है कि वह हमेशा विकेन्द्रित आधार पर ही चलाया जायगा, बड़े पैमानेके केन्द्रित अुद्योगका रूप वह नहीं ले सकता। लेकिन अगर अुससे शक्कर बनानेकी कोशिश हुअी, तो जरूर सारा ताड़-गुड़ शक्करकी मिलोंमें, जब अुन्हें काम नहीं होता तब, शक्कर बनानेके लिअे पहुंच जायगा। अुस संकटका निवारण करनेके लिअे हमें सावधान रहना है।

ताड़-जातिके जितने वृक्ष होते हैं — खजूर, पलमिरा, नारियल और सैगो — अुन सबके रससे गुड़ बनानेका अुद्योग होना चाहिये। गन्नेके गुड़की बनिस्बत अिनके गुड़में विटामिन सी ज्यादा होता है। और गुड़ शक्करसे, जिसका अुपयोग दुर्भाग्यसे आजकल दिनोंदिन बढ़ता जाता है, ज्यादा लाभकारी होता है।

अिन ताड़-वृक्षोंके फूलों और फलोंके पोषक मूल्योंका तुलनात्मक अध्ययन करनेकी जरूरत है। अुन्हें बचाकर सुरक्षित रखने और अुनका सही अुपयोग करनेकी कला भी हासिल करनी चाहिये, ताकि जिन दिनों अुनकी अुपज नहीं होती, अुस समय वे काम आ सकें।

कुछ झाड़ोंमें रस ज्यादा अच्छा होता है, कुछमें फल। दोनों जातियोंका संवर्धन अुनके विशेष अुपयोगको दृष्टिमें रखकर किया जाना चाहिये।

मेरे अनुरोध पर यहां जो शोध हुअी, अुससे प्रगट हुआ है कि खजूरके वृक्षका गुड़ दूसरे ताड़-जातिके झाड़ोंसे अच्छा होता है। दूसरे, गुड़को साफ करनेके लिअे रासायनिक द्रव्य काममें लाये जाते हैं, जिससे अुसके पोषक तत्त्व और क्षार नष्ट हो जाते हैं। तीसरे, पलमिरा-ताड़के पके फल कअी अंशोंमें चावल जैसे होते हैं, और मनुष्य तथा मवेशी दोनोंके लिअे कामचलाअू भोजनका काम दे सकते हैं।

यदि अिस अुद्योगको देशकी आर्थिक व्यवस्थाका स्थायी अंश बनाना हो, तो शीघ्र ही सारे देशमें शराबबन्दी जारी करनी पड़ेगी। गुड़का अुत्पादन और ताड़ीका पीना, दोनों साथ-साथ नहीं चल सकते। अिस बातको हम जितनी जल्दी समझ लें, अुतना ही देशका और हमारा लाभ होगा।

(अंग्रेजीसे) ल० वैद्यनाथन्

विषय-सूची

		पृष्ठ
बापू और महादेवभाअी		२०९
'पहली पंचवर्षीय योजना' पर टीका–१	जो० कॉ० कुमारप्पा	२०९
किसान-संगठन या ग्राम-संगठन?	मगनभाअी देसाअी	२११
रचनात्मक कार्यकर्ता और चुनाव	कि० घ० मशरूवाला	२१२
रचनात्मक कार्यकर्ताओं और मत-दाताओंको मार्गदर्शन		२१२
शहरोंकी ओर?	मगनभाअी देसाअी	२१३
शिवरामपल्लीमें विनोबा — ९	दा० मूं०	२१४
ताड़-गुड़	ल० वैद्यनाथन्	२१६
टिप्पणी :		
पूनामें नवजीवनके प्रकाशन	जी० देसाअी	२१४

www.vinoba.in